ओ३म्

वेदान्त विवेक

(वेदादि सच्छास्त्र प्रमाण समन्वित:)
योगक्रिया मर्मज्ञ पराविद्या विशेषज्ञ

श्री मद्भगवत्पूज्यपादं श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य

श्री मन् आत्मानन्द तीर्थ स्वामिना विरचित :

आर्ष योग चिकित्सालय तथा आर्ष योग विद्यापीठ के संचालक

प्रकाशक:-धर्म संस्थान आर्ष योगाश्रम

खरखौदा, मेरठ, उत्तर प्रदेश

सम्वत् २०३७ विक्रमी १९८० ईसवी

भेंट : तीन रुपया

[टिप्पणी—कृपया भेंट देकर ही पुस्तक लें]

ओ३म्

॥ सच्चिदानन्देश्वराय नमः ॥

—भूमिका—

वेदान्त विवेक पुस्तक में शरीर तथा आत्मा के विषय में प्रश्नोत्तर द्वारा विवेचन प्रस्तुत किया गया है। योगाभ्यास द्वारा आत्म साक्षात्कार करने के लिये शरीर तथा आत्मा विषयक ज्ञान प्राप्त करना अत्यावश्यक है। जो धीर पुरुष योगनिष्ठ हो आत्म दर्शन के लिए निरन्तर यत्नशील है, ऐसे मुमुक्ष एवम्, जिज्ञासु योगी जनों के प्रति उपादेयता को दृष्टिगत रखते हुए ही इस पुस्तक को लिखा गया है। अध्यात्म विद्या का आधार, शरीर, कोष, आत्मा तथा परमात्मा विषयक विवेक ही है। इनके विषय में बिना अध्ययन किये आध्यात्म विद्या को भली भांति नहीं समझा जा सकता है, अर्थात्,

स्वाध्यायाद्योगमासीत योगात्स्वाध्यायमामनेत् ।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते इति ॥

स्वाध्याय पूर्वक योगाभ्यास करे, योगाभ्यास करते हुए स्वाध्याय करें। स्वाध्याय तथा योगाभ्यास की सम्पत्ति से ही परमात्मा का प्रकाश होता है।

स्वामी आत्मानन्द तीर्थ

बुधवार फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी
२०३७ विक्रमी
४ चैत्र २०३७ विक्रमी

ओ३म्

॥ सच्चिदानन्देश्वराय नमः ॥

प्रश्न (१)—शरीर किसे कहते हैं ?

उत्तर—(अ)—भोगायतनम् शरीरम् ॥

शरीर भोगों का आयतन (भोगने का आधार) है।

(आ)—भोगेन्द्रिय अर्थाश्रयम् शरीरम् ॥

भोग, इन्द्रियों तथा विषयों का आश्रय ही शरीर है।

शरीर के माध्यम से ही जीवात्मा सुख दुःख तथा आनन्द को भोगता है।

"शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्"

अर्थात् शरीर ही धर्म सम्पादन का साधन है।

प्रश्न (२)—कितने शरीर हैं ?

उत्तर—छः शरीर हैं।

अ–स्थूल शरीर

आ–सूक्ष्म भौतिक शरीर

इ–अभौतिक सूक्ष्म शरीर

ई–कारण शरीर

उ–तुरीय शरीर

ऊ–साङ्कल्पिक दिव्य शरीर

प्रश्न (३)—क्या शरीरों का अवस्था भेद से विवेचन किया जा सकता है ?

उत्तर—जीवात्मा की दो अवस्थाएं हैं। प्रथम् मुक्तावस्था, दूसरी बद्धावस्था। पूर्व प्रश्न के उत्तर में वर्णित छः शरीर बद्ध तथा मुक्त दोनों अवस्थाओं में पृथक्-पृथक् विभक्त हैं।

प्रश्न (४)—बद्धावस्था में जीवात्मा कितनी अवस्थाओं को प्राप्त होता है ?

उत्तर—बद्धावस्था में जीवात्मा स्थूल शरीर के आश्रय से जाग्रत अवस्था को भोगता है। सूक्ष्म शरीर के आश्रय से स्वप्नावस्था को भोगता है। कारण शरीर के आश्रय से सुषुप्ति अवस्था को भोगता है। तुरीय शरीर के आश्रय से जीवात्मा समाधि अवस्था को भोगता है।

बद्धावस्था में जीवात्मा, एक साथ चार शरीरों का भोग अवस्थानुसार पृथक्-पृथक् भोगता है।

प्रश्न (५)—मुक्तावस्था में जीवात्मा कितने शरीरों का आश्रय लेता है ?

उत्तर—मुक्तावस्था में जीवात्मा दो शरीरों का आश्रय लेता है।

अ—प्रथम् अभौतिक स्वाभाविक सूक्ष्म शरीर, जो नित्य रहता है तथा जीवात्मा के गुणरूप है।

आ—दूसरा नैमित्तिक साङ्कल्पिक दिव्य शरीर, जिस का भोग भोगने के लिये जीवात्मा नैमित्तिक रूप से सृजन करता है तथा निमित्त रूप भोग समाप्त होते ही नैमित्तिक शरीर भी विलय हो जाता है।

प्रश्न (६)—मुक्तावस्था को प्राप्त हुये जीवों के भोग भोगने विषयक कोई प्रमाण हैं।

उत्तर—यजुर्वेद की वाजसनेयी शाखा के शतपथ ब्राह्मण के चौदहवें काण्ड में मुक्तावस्था में जीवात्मा द्वारा भोग भोगने विषयक निम्नलिखित वचन है।

"शृण्वन् श्रोत्रं भवति, स्पर्शयन् त्वग्भवति,
पश्यन् चक्षुर्भवति, जिघ्रन घ्राण भवति,
मन्वानो मनोभवति, बोधयन् बुद्धिर्भवति,
चेतयंश्चित्तम्भवत्यहङ्कुर्वाणोऽहङ्कारो भवति"

सुनने की इच्छा करने पर श्रोत्र, स्पर्श करने की इच्छा करने पर त्वचा, देखने की इच्छा करने पर नेत्र, स्वाद की इच्छा करने पर रसना, गन्ध ग्रहण करने की इच्छा करने पर घ्राण, सङ्कल्प विकल्प करते समय मन, निश्चय करने के लिये बुद्धि, स्मरण करने के लिये चित्त चित्त और अहङ्कार के अर्थ अहङ्कार रूप अपनी स्वशक्ति से जीवात्मा मुक्ति में हो जाता है।

उपनिषदों के शाङ्कर भाष्य में भी भली भांति मनन करने पर जीवात्मा द्वारा ब्रह्मानन्द को भोगने का स्पष्ट वर्णन मिलता है।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ग्रन्थ के "मुक्ति विषय" प्रकरण में स्पष्ट विवेचन मिलता है कि—

"स एकधा भवति, द्विधा भवति, त्रिधा भवति" इत्यादि वचनों का प्रमाण है कि मुक्त जीव सङ्कल्पमात्र से ही दिव्य शरीर रच लेता है, और इच्छा मात्र से शीघ्र छोड़ भी देता है।

प्रश्न (७)—मुक्त अवस्था में शतपथादिक ब्राह्मण ग्रन्थों से मुक्त जीव द्वारा सुखों का निर्बाध भोग, तथा न्याय दर्शन द्वारा मुक्तावस्था में दुःखों का सर्वथा अभाव मानना क्या युक्ति युक्त है?

उत्तर—पुण्यों का प्राबल्य होने पर जीवात्मा मुक्तावस्था में निर्बाध रूप से सुखों का भोग करता है, ऐसा शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण है परन्तु भौतिक शरीर के बन्धनों से सर्वथा रहित होने के कारण दुःखों से सर्वथा मुक्त रहता है, ऐसा न्याय दर्शन का मत है।

प्रश्न (८)—क्या मुक्ति की अवधि निश्चित है ?

उत्तर—मुक्ति निश्चित ज्ञान और पवित्र कर्मों का फल है। मुक्तावस्था तथा बद्धावस्था दोनों ही जीवात्मा की नैमित्तिक अवस्थाएँ हैं। निमित्त के समाप्त होने पर निमित्त जन्य परिणाम भी समाप्त हो जाता है। जीवात्मा का ज्ञान तथा कर्त्तव्य शक्ति सीमित है अतः उसके कर्मों का परिणाम भी सीमित होता है। मुक्ति इकत्तीस नील दश खरब चालीस अरब वर्षों के लिये होती है। इतने समय में छत्तीस हजार बार सृष्टि तथा प्रलय हो जाती है। मुण्डक उपनिषद् में इस विषय में निम्नलिखित प्रमाण मिलता है।

वेदान्त विज्ञान सुनिश्चितार्था
संन्यास योगाद् यतयः शुद्ध सत्वा ॥
ते ब्रह्मलोकेषु परान्त काले
परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे ॥(मु० उ०)॥

अर्थ—वेदान्त रूपी विज्ञान को जिनने भली भाँति समझ लिया है, संन्यास तथा योगाभ्यास द्वारा जिनने अन्तःकरण पवित्र कर लिया है, ऐसे पवित्रात्मा ब्रह्मलोक से परान्तकाल में (महाकल्प के अन्त में) मुक्त हो जाते हैं।

प्रश्न (९)—इन छः शरीरों के भोग विषयक विवेचन अवस्थानुसार क्या हैं?

उत्तर—(१) स्थूल शरीर द्वारा जाग्रत अवस्था में स्थूल जगत को भोगा जाता है।

(२) सूक्ष्म भौतिक शरीर द्वारा स्वप्नावस्था में अन्तःकरण में विद्यमान संस्कारों को सूक्ष्म रूप में भोगा जाता है।

(३) कारण शरीर द्वारा सुषुप्ति अवस्था में सुख को भोगा जाता है।

(४) तुरीय शरीर द्वारा समाधि अवस्था में आनन्द को भोगा जाता है।

(५) अभौतिक स्वभाविक सूक्ष्म शरीर द्वारा मुक्तावस्था में ब्रह्म के आनन्द को भोगा जाता है।

(६) नैमित्तिक सङ्कल्पमय दिव्य शरीर द्वारा मुक्तावस्था में नाना प्रकार के ऐच्छिक विषयों को जीवात्मा द्वारा भोगा जाता है।

प्रश्न (१०)—इन शरीरों, अवस्थाओं तथा भोगों का चित्रमय सम्बन्ध कैसे प्रदर्शित करेंगे?

उत्तर—यह चित्र इस प्रकार है।

अवस्थाएँ
- बद्ध
- मुक्त

बद्धावस्था
- स्थूल शरीर
- सूक्ष्म भौतिक शरीर
- कारण शरीर
- तुरीय शरीर

मुक्तावस्था
- स्वाभाविक अभौतिक सूक्ष्म शरीर
- नैमित्तिक सङ्कल्पमय दिव्य शरीर

बद्धावस्था में शरीर अवस्था और भोगों का सम्बन्ध परक विवेचन—

(१)—स्थूल शरीर, जाग्रत अवस्था, स्थूल जगत का स्थूल भोग

(२)—सूक्ष्म भौतिक शरीर, स्वप्नावस्था, चित्तस्थ संस्कारों का भोग,
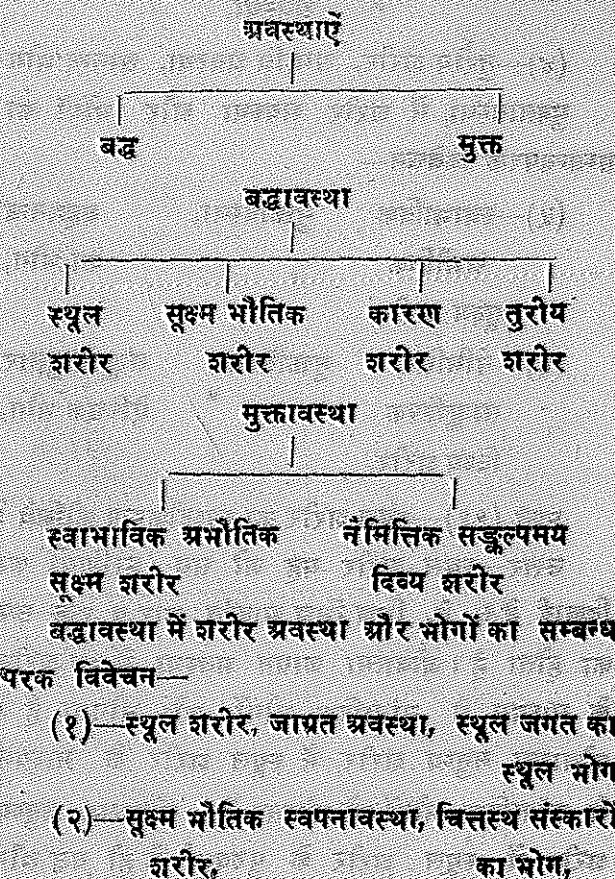
(३)—कारण शरीर, सुषुप्ति अवस्था, पूर्ण सुख का भोग

(४)—तुरीय शरीर, समाधि अवस्था, आनन्द भोग

मुक्तावस्था में शरीर अवस्था और भोगों का सम्बन्धपरक विवेचन—

(५)—स्वाभाविक मुक्तावस्था, ब्रह्मानन्द अभौतिक का भोग, सूक्ष्म शरीर,

(६)—नैमित्तिक मुक्तावस्था, सङ्कल्पानुसार साङ्कल्पिक ऐच्छिक भोग, दिव्य शरीर,

प्रश्न (११)—स्थूल शरीर का स्पष्टीकरण कीजिये ?

उत्तर—स्थूल शरीर यह जो सब प्राणियों का दिखाई देता है, भिन्न भिन्न आकृति भार व रङ्ग रूप का होता है। जीवात्मा जाग्रत अवस्था में इस शरीर के माध्यम से सांसारिक भोगों को भोगता है। जीवात्मा मनुष्य शरीर में स्थूल शरीर के माध्यम से सांसारिक भोगों को भोगता है। जीवात्मा मनुष्य शरीर में स्थूल शरीर के पुरुषार्थ से ही बद्ध और

मुक्त अवस्था को प्राप्त करता है। इसी शरीर को पुरुषार्थ जन्य योग्यता से पुनर्जन्म में शरीर प्राप्त करता है।

प्रश्न (१२)—सूक्ष्म शरीर का स्पष्टीकरण कीजिये ?

उत्तर—यह सूक्ष्म शरीर दो प्रकार का है। एक यह जो सूक्ष्म भूतों का बना हुआ सत्तरह तत्वों के समुदाय अर्थात् पञ्च सूक्ष्म भूत, शब्द, स्पर्श रूप रस गन्ध, पञ्चप्राण अपान व्यान, समान, उदान, पञ्च ज्ञानेन्द्रियों चक्षु, श्रोत्र' घ्राण, रसना, त्वक्, मन तथा बुद्धि का नाम सूक्ष्म शरीर है।

कतिपय विद्वानों के मतानुसार इसमें उन्नीस तत्व हैं, अर्थात पुर्वोक्त सत्तरह तत्व तथा चित्त और अहङ्कार मिलकर उन्नीस तत्व हैं।

दूसरा जो अभौतिक स्वभाविक सूक्ष्म शरीर है, वह मुक्ति में भी जीवात्मा के साथ रहता है।

सत्तरह तत्वों के समुदाय रूप सूक्ष्म भूतों का बना यह सूक्ष्म शरीर जन्म मरण में भी जीवात्मा के साथ रहता है। सृष्टि की प्रलय के साथ प्राणी का सूक्ष्म शरीर भी प्रकृति में लीन हो जाता है,

यदि प्रलय से पूर्व जीवात्मा मुक्त हो जाता है तो उस समय उसका सूक्ष्म शरीर भी प्रकृति में लीन हो जाता है। यदि सूक्ष्म शरीर का आयु है।

यह सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से पृथक् होने पर, दूरी के साथ निरन्तर सूक्ष्मता को प्राप्त होता जाता है तथा स्थूल शरीर से तेज का ह्रास होता जाता है। इस सूक्ष्म शरीर में जन्म जन्मान्तर में किये हुए कर्म संस्कार रूप में विद्यमान रहते हैं। स्थूल शरीर की भांति सूक्ष्म शरीर में भी भार होता है। सूक्ष्म शरीर के भार को जानने की विधि यह है।

मरणोन्मुख प्राणी को तुला पर रख उसका भार ज्ञात कर अङ्कित कर लेना चाहिये। प्राणी को मृत्यु पर्यन्त तुला पर रहने देना चाहिये। प्राणी की मृत्यु होने पर मानक (बांटो) वाला पलड़ा नीचे झुक जायेगा, तुरन्त भार ज्ञात कर पूर्वाङ्कित भार में से न्यून कर लेना चाहिये। जो अन्तर आयेगा वह सूक्ष्म शरीर का भार होगा। भार में यह अन्तर सब प्राणियों का समान होता है।

सूक्ष्म शरीर पारदर्शी होता है तथा किसी का

अवरोधक नहीं होता। मृत्यु होने पर जीवात्मा स्थूल शरीर से पृथक् होकर सूक्ष्म शरीर सहित अन्तरिक्ष (आकाश) में चला जाता है। भ्रमण करता रहता है तथा इसी सूक्ष्म शरीर में विद्यमान संस्कारों के फलस्वरूप जीवात्मा यथा योग्य योनियों को प्राप्त होता है। सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से पृथक् होने पर पुनः स्थूल शरीर प्राप्त होने तक, त्यक्त स्थूल शरीर की आकृति का ही रहता है।

प्रश्न (१३)—क्या सूक्ष्म शरीर प्रत्यक्ष भी किया जा सकता है?

उत्तर—प्राणी स्वप्नावस्था में कभी कभी अपने सूक्ष्म शरीर को देखाता है। प्राणी का सूक्ष्म शरीर स्वप्नावस्था में दीखने पर स्थूल शरीर की आकृति का ही दीखता है। योगीजन संयम (समाधि की परिपक्वावस्था) की अवस्था में सूक्ष्म शरीर में संयम करने पर सूक्ष्म शरीर का साक्षात्कार करते हैं।

प्रश्न (१४) कारण शरीर का स्पष्टीकरण कीजिये?

उत्तर—कारण शरीर का सूक्ष्म शरीर से भी सूक्ष्म होता है अतः कारण शरीर का अनुभव इसके

भोग के अनुभव द्वारा ही किया जा सकता है। यह प्रकृति रूप होने से विभू है अर्थात सब प्राणियों का एक ही है। कारण शरीर के द्वारा ही निद्रावस्था में जीवात्मा पूर्ण सुख का अनुभव करता है। पूर्ण निद्रावस्था में ज्ञानी, अथवा अज्ञानी सभी प्राणी स्वयं को पूर्ण सुखी अनुभव करते हैं, अर्थात निद्रा अवस्था का अनुभव सुख ही है। निद्रा अवस्था के अभाव में पूर्ण सुख का अनुभव नहीं होता है। जाग्रत अवस्था में विषयगत सुख अथवा दुःख का अनुभव होता है परन्तु पूर्ण निद्रावस्था में जीवात्मा केवल मात्र पूर्ण रूप से सुख का अनुभव करता है। कारण शरीर का आयु भी सूक्ष्म शरीर के आयु के समान ही है।

प्रश्न (१५)—तुरीय शरीर तथा इसके भोग एवम् अवस्था को स्पष्ट कीजिये ?

उत्तर—आत्म साक्षात्कार का आधार ही तुरीय शरीर है। परमात्मा ने शरीर रचना के साथ भिन्न भिन्न स्तर के भोगों का अनुभव करने के लिये शरीर में भिन्न भिन्न कोषों की रचना की है। अन्नमय

कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष तथा आनन्दमय कोष।

अन्नमय कोष ही स्थूल शरीर है। प्राणमय तथा मनोमय कोष ही सूक्ष्म शरीर है। विज्ञानमय कोष कारण शरीर है। आनन्दमय कोष ही तुरीय शरीर है।

कुछ लोगों की मान्यता है कि ईश्वर, सच्चिदानन्द स्वरूप, जीवात्मा सत्चित् स्वरूप तथा प्रकृति सत् स्वरूप है। ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप है तथा प्रकृति सत् स्वरूप है। परन्तु जीवात्मा केवल सत्चित् स्वरूप है इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है। जीवात्मा चेतन स्वरूप है। चेतना और ज्ञान का नित्य सम्बन्ध है "चित् संज्ञाने" इस धातु से भी चेतनता का ज्ञान से सम्बन्ध प्रकट होता है। न्याय दर्शन के अनुसार "इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति"

(न्याय दर्शन, १। १। १०)

इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख तथा ज्ञान आत्मा के चिह्न हैं।

आनन्द और ज्ञान का नित्य सम्बन्ध है। ईश्वर का ज्ञान अनन्त है इसीलिये ईश्वर का आनन्द भी अनन्त है, अर्थात ईश्वर आनन्द स्वरूप है। जीवात्मा अल्प और अल्पज्ञ है इसीलिये उसका आनन्द भी अल्प है। जीवात्मा के पास आनन्द मय कोष है।

आनन्दमय कोष का अर्थ है सीमित आनन्द। आनन्द के अभाव में जीवात्मा की चेतनता का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। तुरीय शरीर के द्वारा समाधि अवस्था में जीवात्मा आनन्द को भोगता अर्थात् अनुभव करता है तुरीय शरीर कारण शरीर से भी सूक्ष्म है अतः तुरीय शरीर को इसके भोग आनन्द द्वारा ही अनुभव किया जाता है। सूक्ष्म शरीर के आयु के तुल्य ही इसका आयु है। कुछ लोग 'तुरीय शरीर' न मानकर 'तुरीय अवस्था' मानते हैं, यदि 'तुरीय' अवस्था है तो तुरीय अवस्था को भोगने का माध्यम शरीर कौनसा है अतः तुरीय अवस्था नहीं तुरीय शरीर है।

आनन्द का भी परिमाण है। जीवात्मा के अपने आनन्द से लेकर ब्रह्मानन्द पर्यन्त इसकी सीमा है। भिन्न भिन्न अवस्थाओं में जीवात्मा के ज्ञान की वृद्धि के साथ साथ साथ जीवात्मा का आनन्द भी घटता रहता है। तैत्तिरीयोपनिषद में आनन्द के विभिन्न स्तरों का वर्णन है। इसी तुरीय शरीर द्वारा आनन्दमय कोष के माध्यम से जीवात्मा प्रीति, प्रसन्नता, न्यून आनन्द तथा अधिक आनन्द का अनुभव करता है।

इसी तुरीय शरीर का समाधि जन्य पुरुषार्थ जितना अधिक होता है मुक्ति में उसका आनन्द भी उतना ही अधिक होता है।

प्रश्न (१६)—अभौतिक स्वाभाविक सूक्ष्म शरीर क्या है?

उत्तर—यह जीवात्मा के स्वाभाविक गुण रूप है। मुक्तावस्था में जीवात्मा इसी अभौतिक स्वाभाविक शरीर द्वारा ब्रह्म के आनन्द को भोगता है।

प्रश्न (१७)—सङ्कल्पमय दिव्य शरीर क्या है?

उत्तर—जीवात्मा स्वरूपतः अल्प, अल्पज्ञ और चेतन स्वरूप है। समाधि तथा विद्या के निरन्तर अभ्यास से इसके गुण कर्म और स्वभाव, परमेश्वर के गुण कर्म और स्वभाव के सदृश पवित्र हो जाते हैं, तथा ज्ञान भी बढ़ जाता है, इसके साथ जीवात्मा का सामर्थ्य भी बढ़ जाता है परन्तु जीवात्मा कभी भी सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान नहीं होता। अल्पज्ञता के कारण ही मुक्तावस्था में भी जीवात्मा में इच्छाएँ उत्पन्न होती रहती हैं। उन्हीं इच्छाओं की पूर्त्ति के लिये मुक्त जीवात्मा

दिव्य सङ्कल्पमय शरीर रच लेता है तथा इच्छापूर्ती होने पर तुरन्त छोड़ भी देता है, जैसा कि शतपथ ब्राह्मण के चौदहवें काण्ड में वर्णित है।

इस प्रकार इन उपरोक्त छः शरीरों का वर्णन भलि भांति मनन करने पर विदित होता हैं।

प्रश्न (१८)—जीवात्मा की शक्ति कितने प्रकार की है ?

उत्तर—मुख्यतः जीवात्मा की चेतनता ही उसकी एकमात्र शक्ति है, परन्तु बल, पराक्रम आकर्षण प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, स्वादन, गन्ध, ग्रहण तथा ज्ञान इन २४ सामर्थ्य युक्त जीवात्मा है।

प्रश्न (१९)—आत्मा शब्द का क्या अर्थ है ?

उत्तर—'अत सातत्य गमने' इस 'अत' धातु से आत्मा शब्द बनता है जिसका अर्थ निरन्तर गमन-शील अथवा गतिशील है। आना जाना एकदेशीय तथा अल्प का ही होता है, अनन्त और सर्व व्यापक

का नहीं । अतः यहाँ आत्मा शब्द जीवात्मा का बोधक है ।

'योऽतीत व्याप्नोतीति चराऽचरञ्जगत स आत्मा'

जो सब जगत में व्यापक है वह आत्मा अर्थात् परमात्मा । यहाँ आत्मा शब्द परमात्मा का बोधक है ।

आत्मा शब्द जीवात्मा तथा परमात्मा दोनों के लिये व्यवहृत होता है अतः प्रकरणानुसार उसका अर्थ करना चाहिये ।

जैसे—

आत्मानं रथिनम् विद्धि शरीरं रथमेव च ।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ॥

(कठोपनिषद्)

अर्थ— शरीर रथ है, आत्मा इसमें बैठा हुआ रथी है । बुद्धि सारथी, है मन लगाम है ।

कठोपनिषद् के उपरोक्त वचन में व्यवहृत 'आत्मा' शब्द जीवात्मा परक है ।

अणोरणीयान् महतोमहीयान,
आत्मा गुहायाम् निहितोऽस्य जन्तोः ।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको,
धातुः प्रसादात्महिमानमीशम् ॥
(श्वेताश्वतरोपनिषद्)

अर्थ—सूक्ष्म से भी सूक्ष्म तथा महान से भी महान 'आत्मा' इस जीवात्मा के अन्दर विद्यमान है। उस सङ्कल्परहित महिमामय को जो ईश्वर की कृपा से देखता है। वह शोक रहित हो जाता है।

श्वेताश्वतर उपनिषद् के इस वचन में व्यवहृत 'आत्मा' शब्द परमात्मा के लिये प्रयुक्त हुआ है, क्योंकि यह सर्वव्यापक आत्मा के लिये आया है।

प्रश्न (२०)— क्या मुक्तावस्था में जीवात्मा ब्रह्म में लीन हो जाता है ?

उत्तर—जीवात्मा और ब्रह्म का व्याप्य और व्यापक का सम्बन्ध है, कार्य कारण का नहीं। यदि जीवात्मा ब्रह्म में लीन हो जाय तो ब्रह्म का आनन्द कैसे भोग सकता है अर्थात् मुक्त अवस्था में जीवात्मा ब्रह्म के आनन्द को भोगता है तथा

अव्याहत गति से समस्त ब्रह्माण्ड (जिस ब्रह्माण्ड का वह है उसमें) में कहीं भी जा सकता है । पाप पुण्य की तुल्यता (ऋग्वेद के प्रथम मडंल के चौबीसवें सूक्त दूसरे मन्त्र के अनुसार) से महाकल्प के (परान्त काल के) अन्त में इकत्तीस नील दस खरब चालीस अरब वर्ष के उपरान्त पुनः मनुष्य जन्म धारण करता है ।

प्रश्न (२१)— क्या मुक्तावस्था में भी जीवात्मा के पाप विद्यमान रहते हैं ?

उत्तर— ऋग्वेद के प्रथम् मण्डल के २४ वें सूक्त के दूसरे मन्त्र के भाष्य में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने लिखा है ।

'हे मनुष्या ! वयं यमानादिममृतं, सर्वेषामस्मा कं पाप पुण्यानुसारेण फल व्यवस्थापकं निश्चिनुमः । यस्य न्याय व्यवस्थया पुनर्जन्मानि प्राप्नुमो यूयम-प्यतमेव देवं पुनर्जन्म दातारं विजानीतीति न चैत-दस्माद्न्य एतत्कर्म कर्त्तु शक्नोति । अयमेव मुक्ता-नामपि जीवानां महाकल्पान्ते पुनः पाप पुण्य तुल्य तया पितरि मातरि च मनुष्य जन्म कारयतीति च।

हे मनुष्यो ! हम जिस अनादि स्वरूप सदा अमर रहने वा जो हम सब लोगों को किये हुये पाप और पुण्यों के अनुसार यथा योग्य सुख दुःख फल देने वाले जगदीश्वर देव को निश्चय करते और जिसकी न्याय युक्त व्यवस्था से पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। तुम लोग भी उसी देव को जानो किन्तु इससे अन्य दूसरा कोई उक्त कर्म करने वाला नहीं है, ऐसा निश्चय हम लोगों को है कि वही मोक्ष पदवी को पहुंचे हुये जीवों को भी महाकल्प के अन्त में फिर पाप पुण्य की तुल्यता से पिता माता और स्त्री के बीच में मनुष्य जन्म धारण कराता है।

कर्मों के शेष रहने के कारण ही जीवात्मा मुक्ति से लौटकर जन्म लेता है तथा पाप पुण्य की तुल्यता होने पर मनुष्य जन्म धारण करता है।

प्रश्न (२२)— मुक्त आत्मा कहाँ निवास करता है ?

उत्तर—मुक्त जीवात्मा ब्रह्म में निवास करता है अथात् मुक्त जीवात्मा इसी जगत में रहता हुआ

भी समस्त शारीरिक बन्धनों से रहित होकर ब्रह्मानन्द में निमग्न रहता है।

प्रश्न (२३)— स्थूल शरीर का त्याग करने के उपरान्त बद्ध जीवात्मा कहाँ निवास करता है?

उत्तर—शरीर त्यागने के उपरान्त पुनः गर्भ में प्रवेश करने तक, आकाश (अन्तरिक्ष) में भ्रमण करता रहता है तथा अपने लोक में स्वेच्छानुसार कहीं भी आ जा सकता है। मानसिक सङ्कल्पों के अनुसार सुख दुःख भी अनुभव करता है। बद्ध जीवात्मा अपने पूर्व लोक से भिन्न अन्य लोकों में भी परमात्मा की व्यवस्थानुसार जन्म ले सकता है, परन्तु अन्य ब्रह्माण्ड में जन्म नहीं ले सकता है।

प्रश्न (२४)— बद्ध और मुक्त जीवात्मा की जो दो अवस्था हैं, उनमें अन्तर कैसे किया जाता है?

उत्तर— मुक्ति से पूर्व जीवात्मा शारीरिक बन्धनों से बंधा हुआ जन्म मरण के चक्र में घूमता रहता है उस समय उसकी बद्ध संज्ञा तथा बद्ध अवस्था

होती है। समस्त शारीरिक बन्धनों से रहित होकर जब जीवात्मा ब्रह्म के आनन्द को भोगता है, उस समय उसको मुक्त संज्ञा तथा मुक्त अवस्था होती है।

प्रश्न (२५)— मृत्यु के समय शरीर त्यागने के पश्चात् जीवात्मा कितने समय बाद गर्भ में आता है ?

उत्तर— सामान्यतः मृत्यु के बारह दिन पश्चात् जीवात्मा गर्भ में आता है, यह यजुर्वेद के उनतालीस वें अध्याय के छठे मन्त्र के अनुसार है। अपने अपने कर्मों के फल के अनुसार मृत्यु के पश्चात् जीवात्मा के गर्भ में आने में और भी अधिक समय लग सकता है, परन्तु कम से कम बारह दिन हैं। अधिक समय लगने का आधार कर्म फल है। अधिकतर कर्मों में समानता नहीं होती, अतः फल भी अधिकतर समान नहीं होता। न्यूनतम अवधि तो वर्णित है परन्तु अधिकतम अवधि कर्म फल पर निर्भर करती है।

प्रश्न (२६)—क्या बद्ध जीवात्मा अपने ब्रह्माण्ड में स्थित अन्य लोकों में भी सकता है ?

उत्तर—शरीर त्यागने के उपरान्त जीवात्मा बारह दिन तक सूक्ष्म शरीर की योग्यता को विकसित करने के लिये गुणों की वृद्धि हेतु परमेश्वर की निश्चित व्यवस्थानुसार अन्यान्य लोकों में जाना पड़ता है, ऐसा प्रमाण यजुर्वेद की वाजसनेयी माध्यन्दिनी शाखा के उन्तालीस वें अध्याय के छठे मन्त्र के स्वामी दयानन्द सरस्वती के भाष्य में मिलता है। बारह दिन पश्चात् कर्म फलानुसार परमेश्वर की व्यवथास्वरूप किसी भी लोक में गर्भ में स्थान ग्रहण कर सकता है।

प्रश्न (२७)—मृत्यु के उपरान्त जीवात्मा को गर्भ में आने में कम से कम बारह दिन का समय लगना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—बन्धन की अवस्था में सूक्ष्म शरीर की योग्यता (क्षमता) में जो ह्रास हो जाता है उसकी पूर्ति हेतु यजुर्वेद के उन्तालीस वें अध्याय के छठे

मन्त्रमें बारह दिनों में गुणों की वृद्धि की विभिन्न माध्यमों से व्यवस्था है। उन गुणों की वृद्धि होने पर ही सूक्ष्म शरीर युक्त जीवात्मा गर्भ में आता है।

प्रश्न (२८)— क्या जीवात्मा का नौ मास की अवधि पर्यन्त गर्भवास करना निश्चित है ?

उत्तर— सामान्यतः जीवात्मा नौ मास पर्यन्त गर्भ में निवास करता है परन्तु जीवात्मा के गर्भ में निवास करने के प्रश्न को निम्नलिखित दृष्टि से देखा जाना चाहिये।

जीवात्मा का शरीर में निवास बद्ध अवस्था है, जो उसके पूर्वकृत कर्मों के फलस्वरूप है। मुक्ति इससे श्रेष्ठ अवस्था है। गर्भवास बद्ध अवस्था की ही एक अवस्था है। गर्भावस्था में जीवात्मा की क्रिया अत्यधिक सीमित हो जाती है। कर्मों के कारण जिसको जितने समय का गर्भवास निश्चित है उसे उतने समय गर्भ में रहने के बाद जन्म लेना पड़ता है, अर्थात् गर्भ स्थिति में ही जीवात्मा शरीर को अपने कर्मफल के अनुसार

त्याग कर पृथक् हो जाता है तथा तत्काल ही अन्य जीवात्मा गर्भ प्रविष्ट होकर निर्धारित समय पर जन्म लेता है।

गर्भवास और जन्म यह दोनों भिन्न स्थितियाँ हैं जिनका आधार जीवात्मा का कर्मफल है।

प्रश्न (२९)— क्या परमात्मा, जीवात्मा तथा प्रकृति तीनों ही सर्वथा निराकार हैं ?

उत्तर— परमात्मा तथा जीवात्मा दोनों ही सर्वथा निराकार तथा निरवयव हैं, परन्तु प्रकृति सर्वथा निराकार व निरवयव नहीं है अन्यथा संसार की रचना कैसे होती।

प्रश्न (३०)— क्या जीवात्माएं असंख्य हैं ?

उत्तर— जीवात्मा अल्प तथा अल्पज्ञ है, अतः उसके सीमित ज्ञान की अपेक्षा से जीवात्माएं असंख्य हैं ! परमात्मा का ज्ञान अनन्त है, अतः परमात्मा के ज्ञान की अपेक्षा से जीवात्माएं असंख्य नहीं हैं।

प्रश्न (३१)— इन्द्रियां तथा अन्तःकरण क्या हैं ?

उत्तर— इन्द्रियाँ तथा अन्तःकरण जीवात्मा के बाह्य तथा आन्तरिक उपकरण हैं। इन्द्रियाँ स्थूल उपकरण एवं अन्तःकरण सूक्ष्म उपकरण हैं। हाथ पैर गुदा उपस्थ तथा वाणी ये पाञ्चकर्मेन्द्रियाँ हैं। नाक, कान, आँख, रसना तथा त्वचा ये पाञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। मन, बुद्धि, चित्त, तथा अहङ्कार यह अन्तःकरण है, मन सङ्कल्प करता है, बुद्धि निर्णय करती है, चित्त से स्मरण होता है तथा समस्त संस्कार चित्त में ही रहते हैं। अहङ्कार ही कर्त्तापन है।

प्रश्न ३२—पञ्च कोष क्या है?

उत्तर—स्थूल शरीर ही अन्नमय कोष है। प्राण, अपान, व्यान, समान तथा उदान ही प्राण-मय कोष हैं पञ्चकर्मेन्द्रियाँ मन तथा अहङ्कार ही मनोमय कोष है। कारण शरीर ही आनन्दमय कोष है।

प्रश्न (३३)— क्या जीवात्मा शरीर में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति आदिक अवस्थाओं में एक ही स्थान पर रहता है?

उत्तर— नहीं जीवात्मा जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति आदिक अवस्थाओं में एक ही स्थान पर नहीं रहता। जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति अवस्थाओं को भोगने के लिये शरीर में परमात्मा ने भिन्न भिन्न स्थानों का निर्माण किया है।

जाग्रत अवस्था में जीवात्मा अन्तःकरण सहित भ्रू मध्य में निवास करता है। स्वप्नावस्था में जीवात्मा अन्तःकरण सहित कण्ठ में हिता नामक नाडी के आश्रय से निवास करता है सुषुप्ति अवस्था में जीवात्मा हृदय प्रदेश में निवास करता है। समाधि अवस्था में जीवात्मा मूर्धा में निवास करता है।

तालु प्रदेश का नाम ब्रह्मरन्ध्र तथा शिखा प्रदेश का नाम मूर्द्धा है।

प्रश्न (३४)— मुक्त और बन्ध किन किन बातों से होता है।

उत्तर— परमेश्वर की आज्ञा पालन करने, अधर्म, अविद्या, कुसंग, कुसंस्कार, बुरे व्यसनों से अलग रहने और सत्य भाषण, परोपकार, विद्या, पक्षपात रहित न्याय, धर्म की वृद्धि करने, परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने पढ़ाने और धर्मपूर्वक पुरुषार्थ करते हुये ज्ञान की उन्नति करने, सबसे उत्तम साधनों को करने और जो कुछ करे वह सब पक्षपात रहित, न्याय व धर्मानुसार ही करे, इत्यादि

साधनों से मुक्ति और इसके विपरीत ईश्वराज्ञा भङ्ग करने आदि कर्मों से बन्ध होता है।

प्रश्न (३५)— मुक्ति के विशेष साधन क्या हैं?

उत्तर— मुक्ति के विशेष साधन निम्नलिखित हैं।

विवेक, वैराग्य, षट सम्पत्ति, मुमुक्षुत्व, अनुबन्ध तथा श्रवण चतुष्टय।

विवेक— सत्यासत्य धर्माऽधर्म, कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निश्चय करना ही विवेक है।

वैराग्य— विवेक से सत्यासत्य, धर्माऽधर्म, कर्त्तव्याकर्त्तव्य को जानकर सत्य को स्वीकार कर धर्म पूर्वक कर्त्तव्य का पालन करना तथा असत्य और अधर्म से सर्वथा प्रथक् रहना। विषयों में सर्वथा अनासक्ति।

षट सम्पत्ति अर्थात् छः प्रकार के कर्म करना जो निम्नलिखित हैं।

शम— आत्मा और अन्तःकरण को अधर्माचरण से हटाकर धर्माचरण में सदा प्रवृत रखना।

दम— श्रोत्रादि इन्द्रियों और शरीर के व्यभिचारादि बुरे कर्मों से हटाकर जितेन्द्रियतादि कर्मों में सदा प्रवृत रखना ।

उपरति— दुष्ट कर्म करने वालों तथा दुष्ट कर्मों से सदा दूर रहना ।

तितिक्षा— निन्दा स्तुति हानि लाभ चाहे कितना भी क्यों न हो परन्तु हर्ष शोक को छोड़ मुक्ति के साधनों में लगे रहना ।

श्रद्धा— वेदादि सत्य शास्त्र और इनके बोध से पूर्ण आप्त विद्वान् सत्योपदेष्टा महाशयों के वचनों पर पूर्ण विश्वास करना ।

समाधान— चित्त की एकाग्रता ।

मुमुक्षुत्व— बिना मुक्ति के साधन और मुक्ति के अतिरिक्त किसी में प्रीति न रखना ।

उपरोक्त साधनों के पश्चात् अनुबन्ध अर्थात ये कर्म करने होते हैं ।

अधिकारी— उपरोक्त विवेक वैराग्यादि से युक्त पुरुष अधिकारी है ।

सम्बन्ध— ब्रह्म के प्राप्ति रूप मुक्ति प्रतिपाद्य और वेदादिक शास्त्र प्रतिपादक को यथावत समझ कर अन्वित करना।

विषय— सब सत्य शास्त्रों का प्रतिपादित विषय ब्रह्म है तथा उसकी प्राप्ति रूप विषय वाले पुरुष का नाम विषयी है।

प्रयोजन— सब दुखों की निवृति और परमानन्द को प्राप्त होकर मुक्ति सुख का होना।

तदन्तर श्रवण चतुष्टय का अभ्यास करना।

श्रवण— ब्रह्म विद्या को अत्यन्त ध्यानपूर्वक सुनना।

मनन— श्रवण की हुई ब्रह्म विद्या का एकान्त देश में बैठ कर स्थिर चित्त से मनन करना तथा शङ्का होने पर समाधान करना व कराना।

निदिध्यासन— समाधिस्थ होकर श्रवण व मनन किये विषय को देखना व समझना।

साक्षात्कार—जैसा जिस पदार्थ का स्वरूप, गुण और स्वभाव हो वैसा यथावत जानकर ध्यान योग द्वारा देखना।

प्रश्न ३६—क्या जीवात्मा ईश्वर का अंश है। तथा जीवात्मा और ईश्वर का स्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव कैसा है?

उत्तर—जीवात्मा ईश्वर का अंश नहीं है। जीवात्मा प्रकृति तथा ईश्वर के समान नित्य है। जीव तथा ईश्वर दोनों चेतन स्वरूप है परन्तु ईश्वर सर्वव्यापक, अनन्त, सर्वशक्तिमान तथा, सर्वज्ञ सर्वाधार सर्वेश्वर, सर्वान्तर्यामी, अनादि, अनुपम, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, निर्विकार और सृष्टि कर्त्ता है। ईश्वर जीव तथा प्रकृति तीनों ही अनादि हैं। जीव तथा ईश्वर का स्वभाव पवित्र तथा धार्मिकता आदि है। ईश्वर के सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति प्रलय, सब को नियम में रखना, जीवों को पाप पुण्य के अनुसार फल देना, आदि धर्मयुक्त कर्म हैं। जीव के सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, शिल्प विद्या आदि अच्छे बुरे अर्थात, धर्म अधर्म युक्त कर्म हैं। जीव अल्प, अल्पज्ञ शरीर के एक देश में रहने वाला

अर्थात् एक देशी और परिछिन्न है । जीव परमाणु से भी सूक्ष्म पदार्थ है । ईश्वर के नित्य ज्ञान, आनन्द, अनन्त बल, आदि अनन्त गुण हैं। जीव के

इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति ॥

(न्याय दर्शन)

प्राणाऽपान निमेषोन्मेष जीवन मनोगतीन्द्रियान्तर विकाराः सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि ॥

(वैशेषिक दर्शन)

पदार्थों के प्रतीक की इच्छा, दुःखादि से द्वेष, प्रयत्न, सुख दुःख ज्ञान, प्राण अपान, नेत्र खोलना तथा बन्द करना, जीवन मानसिक सङ्कल्प, गति इन्द्रियों से व्यवहार करना, क्षुधा, तृषा, तथा हर्ष शोकादि से युक्त होना आदि जीव के गुण ईश्वर से भिन्न हैं।

ईश्वर के अनन्त नाम हैं । नाना प्रकार के गुणों से युक्त होने के कारण ईश्वर के अनेक गुणवाचक नाम हैं । सबसे बड़ा सर्वोपरि होने

से ईश्वर का नाम ब्रह्म है।

ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ तथा निज नाम ओइम् है। ओइम् शब्द में तीन अक्षर हैं अ, उ, म।

अकार से अग्नि, विराट् और विश्वादि नामों का ग्रहण होता है।

उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजस आदि नामों का ग्रहण होता है।

मकार से ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञ आदि नामों का ग्रहण होता है।

ईश्वर के अन्यान्य नाम भी ओङ्कारार्थ से जाने जाते हैं।

ओङ्कार को ही चतुष्पाद मानकर वर्णन किया गया है। अकार को ही प्रथम मात्रा अथवा प्रथम् पाद माना गया है। उकार को द्वितीय मात्रा द्वितीय पाद माना है। मकार को तृतीय मात्रा अथवा तृतीय पाद माना गया है। अमात्र अर्थात निराकार ही चतुर्थमात्रा अथवा चतुर्थ (तुरीय) पाद है।

(मा० डूक्योपनिषदानुसार)

व्याकरणानुसार ओइम् शब्द अव रक्षणेधातु से मन् प्रत्यय करने पर "अवतेष्ठि लोपश्च" सूत्र उणादि कोष, १ । १४२ से सिद्ध होता है ।

प्रश्न ३७—क्या जीवात्मा ईश्वर को प्रत्यक्ष देख सकता है ?

उत्तर—उस अनादि परमात्मा को देखने का साधन शुद्धान्तःकरण विद्या और योगाभ्यास से पवित्रात्मा परमात्मा को प्रत्यक्ष देख सकता है । प्राणायाम के द्वारा अन्तःकरण पवित्र तथा अपने आधीन होने पर समाधि अवस्था में पवित्र संस्कारों वाला पवित्रात्मा योगी परमात्मा को अपने अन्तःकरण में प्रत्यक्ष देखता है तथा समाधि अवस्था में प्रत्यक्ष किये पदार्थों को विद्या से यथावत जानता है ।

प्रश्न ३८—जीव शरीर में भिन्न, विभू है वा परिछिन्न ?

उत्तर—जीव शरीर नहीं अपितु शरीर से भिन्न सत्ता वाला है । जीव अल्प, अल्पज्ञ, एकदेशी तथा परिछिन्न है । जीवात्मा शरीर में व्यापक नहीं है ।

अपितु जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति आदिक अवस्थाओं के अनुसार शरीर के भिन्न भिन्न भागों में रहता है, अतः जीवात्मा परिछिन्न है। जीव एक सूक्ष्म पदार्थ है जो कि एक परमाणु में भी रह सकता है। परन्तु उसकी शक्तियाँ शरीर में प्राण बिजली और नाड़ियों के साथ संयुक्त हो रहती है। उनसे सब शरीर का वर्तमान जाना जाता है।

प्रश्न २९—प्रकृति क्या है तथा प्रकृति से सृष्टि किस प्रकार उत्पन्न हुई एवं वर्तमान सृष्टि श्वेतवा-राह कल्प को उत्पन्न हुये कितना समय व्यतीत हुआ है और समग्र सृष्टि काल कितना है ?

उत्तर—(सत्व) शुद्ध (रजः) मध्य (तमः) जाड्य अर्थात जड़ता तीन वस्तु मिलकर जो संघात है उसका नाम प्रकृति है। उससे यह महतत्व बुद्धि, उससे अहङ्कार, उससे पञ्चतन्मात्रा सूक्ष्म भूत शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध और दश इन्द्रियाँ श्रोत्र, नेत्र, नासिका रसना त्वचा, वाक्, पाणि, पायु, उपस्थ और गुदा तथा ग्यारहवाँ मन पाञ्च तन्मात्राओं से पृथिवी, जल अग्नि, वायु, आकाश पञ्चभूत ये चौबीस तथा पच्चीसवां पुरुष जीव तथा परमेश्वर है।

यह सृष्टि उत्पत्ति का क्रम है। यह जगत उत्तम मध्यम और नीच तीन प्रकार का है।

इस वर्तमान सृष्टि श्वेतवाराह कल्प को वर्तमान सम्वत् २०३७ विक्रमी में १९७३८१३०८० वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, यह ८१ वां वर्ष भोग रहा है। यह ८१ वें वर्ष सहित इस सृष्टि श्वेतवाराह कल्प के २३४६१८६९२० वर्ष भोगने शेष हैं। समस्त सृष्टि काल ४३२००००००० वर्ष का होता है। इतना ही काल प्रलय का होता है। सृष्टि काल में एक हजार चतुर्युगियाँ होती हैं जिनमें चौदह मन्वन्तर होते हैं। सृष्टि काल तथा प्रलय काल मिलकर एक अहोरात्र होता है।

प्रश्न ४०— वर्तमान सृष्टि श्वेतवाराह कल्प में मनुष्योत्पत्ति कब कैसे और कहाँ हुई तथा सृष्टि में मनुष्य कितने काल रहता है ?

उत्तर— वर्तमान सृष्टि वाराह कल्प के आरम्भ में पृथिवी उत्पन्न होने के पश्चात् वनस्पति वृक्षादि स्थावर तथा पशु पक्षी आदि की क्रमशः उत्पत्ति हुई तदोपरान्त कल्पारम्भ के १२९६०००० वर्ष पश्चात्

विश्व के एक मात्र स्थलीय प्रदेश त्रिविष्टप (तिब्बत) में कैलाश पर्वत तथा मानसरोवर के समीप मनसर नामक स्थान सर सर्वप्रथम् अमैथुनी सृष्टि द्वारा अनेक मानवों की तरुण अवस्था में उत्पत्ति हुई, जहाँ आज भी मनसर नामक ग्राम विद्यमान है। सृष्टि अर्थात् कल्पान्त के १२९६०००० वर्ष पूर्व मानव सृष्टि समाप्त हो जाती है। सृष्टि अर्थात् सर्ग में मानव सृष्टि ९९४ चतुर्युगी पर्यन्त अर्थात् ४२९४०८०००० वर्ष पर्यन्त रहती है जो १४ मन्वन्तर काल के बराबर है। वर्तमान सम्वत् २०३७ विक्रमी में मानव सृष्टि को उत्पन्न हुये १९६०८५३०८० वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, यह ८१ वां वर्ष भोग रहा है तथा इस ८१वें वर्ष सहित २३३३२२६९२० वर्ष भोगने शेष हैं। कल्पान्त के १२९६०००० वर्ष पूर्व सर्वप्रथम मानव सृष्टि समाप्त होती है तत्पश्चात् पशु पक्षी आदि एवम् स्थावर वृक्षादि तथा वनस्पति क्रमशः समाप्त होते हैं।

प्रश्न ४१— वेदाभिर्भाव कब कैसे और कहाँ हुआ तथा सृष्टि वेदप्रकाश कितने काल पर्यन्त रहता है ?

उत्तर— सृष्टि अर्थात् कल्पारम्भ १२९६०००० वर्ष पश्चात् अमैथुनि सृष्टि द्वारा मानवोत्पत्ति तरुण अवस्था में त्रिविष्टप (तिब्बत) में मनसर नामक स्थान पर हुई। मानवोत्पत्ती के समय दो प्रकार के मानव उत्पन्न हुये। प्रथम् ऋषि कोटि के दूसरे साध्य अर्थात् साधारण कोटि के। छियालीस

यजुर्वेद के ३१वें अध्याय के नवम् मन्त्रानुसार आरम्भ में ऋषि और साध्य कोटि के मनुष्य उत्पन्न हुये। ऋषि कोटि के मनुष्यों ने आरम्भ से ही समाधि का अभ्यास किया। मानवोत्पत्ति के ५ वर्ष बाद समाधिस्थ ऋषियों ने अपने अन्तःकरण में वेदों को मन्त्र रूप में प्रत्यक्ष देखा तथा स्वर सहित सुना। ऋग्वेद के प्रत्यक्ष कर्त्ताओं में सर्वश्रेष्ठ ऋषि की अग्नि संज्ञा हुई। यजुर्वेद के प्रत्यक्ष कर्त्ताओं में सर्वश्रेष्ठ ऋषि की वायु संज्ञा हुई। सामवेद के प्रत्यक्ष कर्त्ताओं में सर्वश्रेठ ऋषि की आदित्य (सूर्य) संज्ञा हुई। अथर्ववेद के प्रत्यक्ष कर्त्ताओं में सर्वश्रेष्ठ ऋषि अङ्गिरा की संज्ञा हुई। ये चारों सबसे अधिक पुण्यवान थे।

यद्यपि वेदों का प्रकाश समस्त समाधिस्थ ऋषियों पर समान रूप से हुआ परन्तु उत्कृष्टता के आधार पर ऋषियों की अग्नि, वायु, आदित्य तथा अङ्गिरा पद वाचक संज्ञा हुई।

जिन-जिन मंत्रों के अर्थों को जब जब ऋषियों ने परमात्मा के आश्रय से समाधिस्थ होकर जानना चाहा तब तब ऋषियों के पवित्र अन्तःकरण में परमात्मा ने उनका प्रकाश किया।

वेदों का आविर्भाव अर्थात् वेदों का प्रकाश त्रिविस्टप (तिब्बत) में मनसर नामक स्थान पर मानवोत्पत्ति के ५ वर्ष पश्चात् हुआ। वर्तमान विक्रम सम्वत् २०३७ में वेदाभिर्माव को १९६०८५३०७५ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, यह ७६ वां वर्ष भोग रहा है तथा इस ७६ वें वर्ष सहित २३३३२२६९२० वर्ष वेद प्रकाश काल के शेष हैं। समस्त वेद प्रकाश काल ४२९४०७६९५ वर्ष हैं।

प्रश्न (४२)—कितने पदार्थ नित्य हैं ?

उत्तर—जगत की उत्पत्ति के पूर्व परमेश्वर, प्रकृति परमाणु, काल और आकाश तथा जीवों के अनादि होने से जगत की उत्पत्ति होती है, यदि इनमें से एक भी न हो

तो जगत भी न हो। परमेश्वर, जगत का कारण प्रकृति परमाणु काल तथा आकाश एवम् जीवात्मा यह तीनों पदार्थ नित्य हैं अर्थात् प्रथम् प्रधान निमित्त कारण परमात्मा, द्वितीय साधारण निमित्त कारण जीवात्मा, तथा तृतीय उपादान कारण प्रकृति, परमाणु, काल तथा आकाश यह तीनों जगत् के नित्य कारण हैं।

॥ इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य
श्री आत्मानन्द तीर्थ स्वामिनः कृतौ
"वेदान्त विवेक" ग्रन्थः पूर्त्तिगमात् ॥

ग्रन्थकार द्वारा लिखित महत्वपूर्ण ग्रन्थ

१. वेदानुसार वास्तविक सृष्टि सम्वत्
२. आर्ष योगोपनिषद्
३. योगानुक्रमणिका
४. गायत्री विवेक
५. वेदान्त विवेक
६. योगामृत

प्राप्ति संस्थान—आर्ष योगाश्रम धर्म संस्थान
खरखौदा, मेरठ, उ० प्र०

प्राप्ति स्थान—तांत्रिक आश्रम
गढ़ रोड जयदेवी नगर (मेरठ)

टिप्पणी—श्री बंगाली तांत्रिक मेरठ के पवित्र
सहयोग से प्रकाशित।